हमारे यहाँ उपलब्ध अन्य प्रकाशन

1. **जैन मूर्ति पूजा में व्याप्त विकृतियाँ** (तृतीयावृत्ति शीघ्र प्रकाशित)
   लेखक--श्री बिरधीलाल सेठी, प्रस्तावना व प्राक्कथन : सिद्धांताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री, विद्यावारिधि इतिहासरत्न डा. ज्योतिप्रसाद जैन
   मूल्य : 2 रुपया
2. **षडावश्यकों एवं मूर्ति निर्माण में विकृतियाँ** (द्वितीय संस्करण)
   लेखक--पं. भँवरलाल पोल्याका, जैन दर्शनाचार्य, साहित्य शास्त्री।
   प्राक्कथन--प्रो. प्रवीणचन्द्र जैन। मूल्य : 50 पैसे,
3. **अरहंत प्रतिमा का अभिषेक जैन धर्म सम्मत नहीं** (तृतीयावृत्ति शीघ्र प्रकाशित)
   लेखक--स्व. पं. बंशीधर शास्त्री, एम. ए.। प्रस्तावना--डा. हुकमचंद भारिल्ल, एम. ए., पी-एच. डी., शास्त्री, न्यायतीर्थ। मूल्य : 80 पैसे
4. **आदर्श नित्य नियम पूजा,** (सर्वश्रेष्ठ रचना के रूप में पुरस्कृत)।
   लेखक--कविभूषण अमृतलाल चंचल मूल्य : 50 पैसे
5. **जैन साधु कौन ? (शीघ्र प्रकाशित)** लेखक--बिरधीलाल सेठी।
   मूल्य : 1 रुपया

प्राप्ति स्थान :--

1. जैन संस्कृति संरक्षण समिति (पता मुख पृष्ठ पर)।
2. वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर--302003
3. रतनलाल जैन एण्ड ब्रदर्स, मेहता भवन, एस. टी. क्लोथ मार्केट, इन्दौर 452002

प्रचारार्थ--प्रकाशक को मूल्य पेशगी भेजने पर--25 रु. की पुस्तकों पर रजिस्ट्री खर्च नहीं लिया जावेगा और 50 रु. की पर 20% तथा 100 रु. या इससे ज्यादा की पर 25% डिस्काउंट भी दिया जावेगा।

मुद्रक : श्री वीर प्रेस, जयपुर--3

पद्मावती आदि शासन देवों, होम, हवन, मंत्र, तंत्र-

सम्बन्धी

मिथ्यात्व

विमलचन्द कासलीवाल
५५-बी, नेमीनगर जैन कॉलोनी,
इन्दौर (म० प्र०) ४५२ ००१

लेखक :

बिरधीलाल सेठी

प्रकाशक :

जैन संस्कृति संरक्षण समिति

8, अरविंद पार्क, टोंक फाटक, जयपुर 302015

द्वितीयावृत्ति (परिवर्धित) मूल्य : 80 पैसे मात्र

3000 प्रतियाँ

पद्मावती आदि शासन देवों तथा होम, हवन, मंत्र, तंत्र संबंधी मिथ्यात्व

भेदविज्ञान धर्म की पहली आवश्यकता--जैन धर्मानुसार, हमारी आत्माएँ स्वयं ही अपने भाग्य की निर्माता हैं, हम जैसे कर्म करेंगे वैसे फल भोगना ही पड़ेगा। हमारी आत्माएँ अनंत काल से क्रोध, मान, माया, लोभ रूपी कषाय के संस्कारों से ग्रस्त हैं और वही हमारे संसार परिभ्रमण और सब दुःखों का कारण है। सच्चा सुख किसमें है–इन्द्रिय भोगों की तृष्णा को अधिकाधिक बढ़ाने में है या उन्हें शरीर की प्राकृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति तक सीमित कर देने में है, क्रोध, मान, माया, लोभ के तनावों से भरा हुआ रहने में है या इन तनावों से रहित रहने में है–इसका ज्ञान न होने अर्थात् भेदविज्ञान न होने से हम सुख प्राप्ति के लिए दौड़ते हुए भी उसे प्राप्त नहीं कर पारहे हैं। अतः इस रहस्य को समझकर, विवेकपूर्वक, सम्यग्दृष्टि पूर्वक, कषाय के संस्कारों से मुक्त होकर पूर्णतया निराकुल होकर अतीन्द्रिय सुख का प्राप्त करना ही हमारे जीवन का ध्येय है और वही मोक्ष है। धर्म का यही उद्देश्य है। परन्तु इसके लिए हमें स्वयं ही पुरुषार्थ करना होगा। अरहन्त भगवान की उपासना का केवल इतना ही उद्देश्य है कि उनके दर्शनों से हमारे आत्म-स्वरूप का स्मरण होकर (स्व पर का भेदविज्ञान होकर) उनकी तरह वीतराग बनने अर्थात् कषाय मुक्त होने के लिए हमारा पुरुषार्थ जाग्रत हो। उससे हमारी कषायें, भोगों की तृष्णा ज्यों-ज्यों तीव्र से मन्द व मन्दतर होती जावेंगी, हमारे समताभाव व निराकुलता में वृद्धि होती जावेगी, उतना उतना मोक्ष हम इस जीवन में भी पा सकेंगे और सब प्रकार के तनावों से रहित सुख शांति का अनुभव करेंगे। कर्मफल की वैज्ञानिक प्रक्रिया के अनुसार, कषायजन्य पूर्व कर्मों से, इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग के दुःख तो आवेंगे ही, उन्हें न कोई देवता दूर करसकता है, न

अरहन्त भगवान। धार्मिक व्यक्ति दुःखों को पूर्वकृत कर्मों का फल मानता है, उनके लिए दूसरों को दोष नहीं देता। उसमें समता भाव व संकल्प शक्ति पैदा हो जाती है अतः उसे दुःख ही नहीं प्रतीत होता। एक ओर उसके पूर्वकृत असाता कर्म बिना फल दिये या कम दुःख देकर ही झड़जाते हैं दूसरी ओर उस समय संक्लेश भाव न रखकर समता भाव रखनेसे नये असाता कर्मों का बंध नहीं होता। अरहन्त भगवान की उपासना से दुःख नाश होने का यही आशय है। परन्तु मिथ्यात्व व कषाय के संस्कार भेदविज्ञान हो जाने मात्र से ही दूर नहीं हो जाते। उन संस्कारों को तोडने के लिए विवेकी जन भेद-विज्ञान की भावना को बार-बार भाते हैं और अन्य अल्पज्ञों को भी इसके लिए प्रेरणा देते हैं क्योंकि इसके बिना व्यक्ति में आत्म-विश्वास व पुरुषार्थ जाग्रत नहीं होता, वह बहिरातम व परमुखापेक्षी ही बना रहता है।

अरहंत भगवान की उपासना से सांसारिक कामनायें पूरी होना मानना मिथ्यात्व है—जैसाकि ऊपर कहागया है अरहन्त भगवान की भक्ति तो केवल उन्हीं की तरह वीतराग बननेको कीजाती है और उसका फल है निराकुल, सबप्रकार के तनावों से रहित सुख शांति मय जीवन। सांसारिक कामनाओं की पूर्ति की तृष्णा की खाई कभी नहीं भर सकती कि जिसका फल दुःख ही दुःख है। अतः जो व्यक्ति धर्म के द्वारा सांसारिक कामनाओं की पूर्तिकी तृष्णा रखते हैं वे तो अपने आपको वीतराग अरहन्तों का उपासक व जैन कहने के अधिकारी ही नहीं हैं। जो साधु व विद्वान भी कहते हैं कि अरहन्त भगवान की भक्ति से सांसारिक कामनाएँ पूरी हो सकती हैं और उनकी पूर्ति के लिए महावीरजी, तिजारा, पद्मपुरा आदि अतिशय क्षेत्रों की पूजा भक्ति व मनोतियों का समर्थन करते हैं वे मिथ्यात्व का ही पोषण कररहे हैं क्योंकि शास्त्रों में कहा है कि जैनत्व की सबसे पहली आवश्यकता सम्यग्दर्शन है और जो व्यक्ति लौकिक वांछाएँ रखता है वह सम्यग्दृष्टि नहीं होसकता। अतः होना तो यह चाहिए था कि वे केवल शास्त्रों के आधार से नहीं प्रत्युत युक्तियों के आधार पर कर्म फल की उपरोक्त वैज्ञानिक प्रक्रिया को समझाकर अपने भक्तों के गले उतारते कि हमारे कर्मों का फल हमें ही भोगना है अपनी कषायों को निर्मल करके प्रायश्चित्त

और प्रतिक्रमण द्वारा, आबद्ध कर्मों की निर्जरा करके हम स्वयं ही अपने दुःखों को दूर या हलका करसकते हैं, अरहन्त भगवान या अन्य कोई देवता कुछ नहीं करसकता। तीर्थंकरों पर भी दुख आये हैं, वेभी कुछ नहीं कर सके। धर्म करोगे उसका फल तो इस जीवन में ही तत्काल मिलना शुरू हो जावेगा। सब प्रकार के तनाव जाते रहेंगे। आजकल तनावग्रस्त जीवन के कारण अनेक प्रकार के शारीरिक और मानसिक रोग पैदा होते रहते हैं, उनसे बचोगे; क्योंकि सबसे पहला सुख नीरोगी शरीर है। परन्तु खेद है हमारे साधु व विद्वानों ने गलत तरीका अपनाया। भेदविज्ञान की भावना द्वारा तृष्णा को कम करने के बजाय उनने धर्म का फल स्वर्गों का सुख बताकर उनकी भोगों की तृष्णा को बढ़ावा दिया, अरहन्त प्रतिमाओं में अतिशय और चमत्कार की कल्पना करके उनके मिथ्यात्व को और दृढ़ कर दिया, उन्हें बुतपरस्त बना दिया, लोग तीर्थंकर प्रतिमाओं की मनोती करने लगे यह भी नहीं सोचा कि जिन-जिन अरहन्त प्रतिमाओं में हम अतिशय और चमत्कार मानते हैं, वे अपने भक्तों की मनोतियाँ कैसे पूरी कर सकती हैं जबकि वे अपने पर आये उपसर्गों से व चोरों से अपनी स्वयं की भी रक्षा नहीं कर सकतीं। एक पत्र के संपादक जी ने लिखा है कि दरिद्रता होने पर धन प्राप्ति के लिए तथा पुत्र-प्राप्ति के लिए पूजा करना मिथ्यात्व नहीं है। अरहन्त प्रतिमाओं की मनोती करने का समर्थन करते हुए एक अन्य बन्धु ने यह भी लिखा है कि साधारण व्यक्ति जो कुछ भी करता है वह किसी आकांक्षा की पूर्ति के लिए ही करता है। अतः जिस प्रकार कडवी दवा की गोली को शक्कर में लपेट कर देते हैं उसी प्रकार हमें भी धर्म से सांसारिक कामनाओं की पूर्ति का प्रलोभन तो रखना ही पड़ेगा। यहाँ प्रश्न यह है कि क्या और कोई भी प्रयत्न व पुरुषार्थ किये बिना केवल अरहन्त प्रतिमाओं की पूजा या मनोतियाँ करने से ही दरिद्रता मिट जाती है, पुत्र आदि की कामनाएँ पूरी हो जाती हैं? ऐसा कोई भी नहीं कह सकता; परन्तु जो पूजा मनोतियाँ नहीं करते उन्हें समुचित प्रयत्न व पुरुषार्थ करने पर, असाता कर्म का तीव्र उदय नहीं हुआ तो धन, पुत्र आदि की प्राप्ति होती ही रहती है। कारण यह है कि धर्म सेवन से, पूजा करने से शुभ भाव होते हैं और केवल

उससे ही निराकुलता पैदा होकर, असाता कर्म का उदय हो तो भी शांति तो मिलती है परन्तु जैसा कि ऊपर कहा गया है, धन, पुत्र आदि की सांसारिक कामनाएँ भी पूरी जो जावें--यह असंभव है। अतः धर्म से सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के झूंठे प्रलोभन को दवा की गोली के ऊपर लिपटी शक्कर के समान कहना मिथ्यात्व का ही प्रचार करना है, क्योंकि वह शक्कर के समान मीठी वस्तु तो दवा के विरोधी गुण वाली है जो दवा का प्रभाव ही नहीं होने देती। भगवान महावीर ने तो ईश्वरवाद के विरुद्ध क्रांति करके हममें यह श्रद्धा तथा पुरुषार्थ जगाने का प्रयत्न किया था कि हमारी आत्मा में ही अनन्त शक्ति है, और उसे जगाकर हम स्वयं ही अपने कर्मों को नष्ट कर सकते हैं, कोई भी कोई भी बाहरी शक्ति उन्हें नहीं मिटा सकती। परन्तु उपरोक्त मान्यता तो महावीर द्वारा दी गई दवा से विरोधी गुण वाली मीठी शक्कर है। इस झूंठी मान्यता के कारण हमारे दैनिक पूजा पाठ आदि भी भगवान से मांगने तथा पाप माफ करने की भावना से प्लावित हो गये हैं और हमारी आत्मा के पुरुषार्थ को जगने नहीं दे रहे हैं अस्तु, जिस वैज्ञानिक जैन धर्म ने ईश्वर को भी नहीं माना उसमें ईश्वरवादी धर्मों के समान पद्मावती आदि शासन देव-देवियों की भी कल्पना कर लेनी पड़ी है। उसके परिणाम स्वरूप जब अरहन्त प्रतिमाओं की पूजा व मनोती से सांसारिक कामनाएँ पूरी नहीं होती तो लोग शासन देवताओं की शरण में चले जाते हैं और जब उनकी भी मनोतियाँ पूरी नहीं होती तो अन्य धर्मों के देवी देवताओं की शरण में चले जाते हैं, यद्यपि जैसा कि आगे प्रमाणित किया गया है वे भी कल्पित ही हैं।

शासन देवों का अस्तित्व ही नहीं--कथित शासन देवी देवताओं के समर्थन में कहा जाता है कि वे जैन शासन के रक्षक हैं तथा धर्म और धर्मात्माओं पर आने वाले विघ्न व संकट को दूर करने को सदा तत्पर रहते हैं। इनके समर्थक विद्वान अपनी मान्यता के समर्थन में समय-समय पर अपने लेखों में पौराणिक कथाओं के उदाहरण देते रहते हैं यथा "वीर" दि. 1-12-81 में एक विद्वान बन्धु ने मेरे लेखों की आलोचना करते हुए, आचार्य अकलंक देव द्वारा तारादेवी को शास्त्रार्थ से भगाना, स्वामी समंतभद्र द्वारा शिवपिंडी

से भ. चन्द्रप्रभु की मूर्ति का प्रगटन, मुनिमानतुंग द्वारा 48 ताले तोड़ना, चारण ऋद्धिधारी मुनियों द्वारा आकाश गमन आदि के उदाहरण देकर पद्मावती, चक्रेश्वरी, ज्वालामालिनी आदि देवियों की सहायता से ही यह संभव होना बताया है और लिखा है कि "सिवाय किसी अदृश्य शक्ति की सहायता के यह सब कैसे संभव हो सकता है।" उनने यहाँ तक लिख दिया है कि "जिनदेव की आराधना, पूजन व जाप का विधान है। फल कौन देता है। आपकी भक्ति से प्रभावित जिन शासन से अनुबन्धित देवी देवता ही आपको मार्ग दर्शन देते हैं तथा क्रूर ग्रहों के प्रकोपों से शांति प्रदान करने में सहायक होते हैं।"

इस सम्बन्ध में मेरा निम्नानुसार कहना है--

(1) जैन करणानुयोग के ग्रन्थों में अलग-अलग प्रकार के देव बताये गये हैं उनमें से किसी भी प्रकार के देवों के लिए यह कथन नहीं है कि वे जैन शासन के व धर्मात्माओं के रक्षक हैं। गोमट्टसार कर्मकाण्ड व त्रिलोकसार आदि में जहाँ-जहाँ यक्ष-यक्षियों के वर्णन हैं, वहां किसी के लिए यह नहीं लिखा गया है कि वे जैन शासन के रक्षक शासन-देव हैं, न यह लिखा गया है कि इनकी पूजा भक्ति करना चाहिये। इस प्रकार जब जैनकरणानुयोग के ग्रन्थों के अनुसार शासन के रक्षक रूप में कोई देवी-देवताओं का अस्तित्व ही सिद्ध नहीं होता तो पुराणों व प्रतिष्ठापाठों आदि में आये वर्णनों का कोई महत्व नहीं है। अन्य शास्त्रों के अवलोकन से यह भी विदित होता है कि कुंदकुंदाचार्य से लेकर आचार्य जिनसेन के काल तक शासन देव पूजा का कोई विधान नहीं है। आचार्य कुंदकुंद ने तो स्पष्ट ही लिखा है, "असंजदं ण वंदे" अर्थात् असंयमी को नमस्कार नहीं करना चाहिए। अस्तु, शासनदेवों का यदि अस्तित्व भी होता तो भी जैन धर्मानुसार उनकी पूजा भक्ति करना मिथ्यात्व है क्योंकि देव गति में किसी को भी संयम होता ही नहीं है। आचार्य जिनसेन के महापुराण में चौबीसों तीर्थंकरों का विस्तृत चरित्र दिया गय है परन्तु किसी भी तीर्थंकर के चरित्र में किसी एक भी शासनदेवी का उल्लेख नहीं है जबकि शासन देवों के समर्थकों की मान्यता है कि प्रत्येक तीर्थंकर

का एक-एक शासनदेव और देवी है। प्रतिष्ठापाठों में भी सबसे प्राचीन प्रतिष्ठापाठ जयसेन तथा वसुनंदि के माने जाते हैं, उनमें शासनदेव देवियों का नाम भी नहीं है। एक बंधु ने लिखा है कि भद्रबाहु स्वामी के उवसग्गहर स्तोत्र में पद्मावती और धरणेन्द्र का उल्लेख है। परन्तु जैन इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान डा. ज्योतिप्रसाद जी जैन ने बताया है कि यह स्तोत्र दि० जैन आम्नाय का नहीं है। इसी प्रकार एक अन्य विद्वान ने स्वामी समंतभद्र के स्वयंभूस्तोत्र में धरणेन्द्र पद्मावती का उल्लेख होना बताया है जो भी गलत है। मूल स्वयंभूस्तोत्र में ऐसा कोई पद्य नहीं है। वहां तो यह पद्य है—"सर्पाधिराजाः कमठारितो यै, ध्यानस्थितस्यैव फणावितानैः। यस्योपसर्गं निरवर्तयत्तं, नमामि पार्श्वं महतादरेण" ।। इससे कैसे अर्थ निकाला जा सकता है कि उपसर्ग दूर करने वाला सर्पराज धरणेन्द्र पद्मावती थे? प्रसिद्ध विद्वान पं० मिलापचन्दजी रतनलाल जी कटारिया ने भी जैन निबन्ध रत्नावली के चार लेखों में अनेक शास्त्रीय प्रमाण देकर प्रतिपादित किया है कि किसी भी प्रामाणिक प्राचीन जैन आगम में शासन देव देवियों का कथाचरित्र नहीं मिलता है, न यह मिलता है कि किस वजह से ये शासनदेव देवियाँ मानी गई हैं, न धरणेन्द्र की पद्मावती नाम की देवी होने और उन दोनों के भ० पार्श्वनाथ के शासन देव-देवी होने का उल्लेख मिलता है।

परन्तु बाद का समय जैन धर्मावलम्बियों के लिए विशेषकर दक्षिण भारत में बड़ी कठिनाई का व्यतीत हुआ। शैवों के प्रभाव से कई नरेशों ने जैनियों पर अमानुषिक अत्याचार किये। जैसाकि विंसेंट ए० स्मिथ ने भारत वर्ष के इतिहास में लिखा है, पांडया राज्य के नरेश नेदुमरन पांडया ने 8000 जैनियों को मरवा डाला और उस स्थान पर मदुरा में अब भी शैवों द्वारा प्रतिवर्ष उत्सव मनाया जाता है। मिश्रबन्धु कृत भारतवर्ष का इतिहास द्वितीय खण्ड पृष्ठ 542 व 415 पर भी लिखा है कि मैसूर नरेश विट्टदेव ने बहुत से साधुओं और श्रावकों को कोल्हू मे पिरवा डाला तथा महाराष्ट्र में भी यादव वंशी राजा ने कई जैन मन्दिरों से मूर्तियाँ फिकवा कर शैव मूर्तियाँ प्रतिष्ठित करवा दीं। ऐसे संकट के समय में जैन गुरुओं ने जैन मन्दिरों के बाहरी भाग में हिन्दुओं की सी मूर्तियाँ स्थापित करवाना

शुरू कर दिया ताकि उससे ऐसा लगे कि ये हिन्दू देवताओं को मानते हैं। दिशाओं के दस दिग्पाल हिन्दू धर्म में माने जाते हैं वैसे ही हमारे यहाँ भी 10 दिग्पाल कल्पित कर लिए गये। उनमें से 8 के तो नाम भी वही हैं कि जो हिन्दू शास्त्रों में हैं। पं० आशाधरजी ने नित्यमहोद्योत अभिषेक पाठ में ईशान दिशा के दिग्पाल का यह स्वरूप लिखा है, "गले में बंधे घुंघरुओं के रुणझुण शब्द से वाचालित और नूपुरों के अव्यक्त शब्दों से रमणीय ऐसे ऊँचे सींगों वाले मोटे सफेद बैल पर जो बैठा है, जिसके सर्पों के आभूषण चमक रहे हैं, जिसकी जटा अर्द्धचन्द्र और चोटी में सर्प लिपटे हुए हैं, एवं जो त्रिशूल और कपाल को धारण किये हैं और नंदी आदि गण और पार्वती साथ में है ऐसे ईशानदेव को मैं पूजता हूँ। हिन्दू शास्त्रों में जो शिवजी का रूप है, क्या यह हुबहू उसकी नकल नहीं है? इसी प्रकार हिन्दू धर्म में काली महाकाली, चामुण्डा आदि देवियाँ मानी गई हैं उनकी नकल पर उन्हीं के कुछ नामों में अपने नये नाम मिलाकर और उनके साथ तीर्थंकरों का सम्बन्ध जोड़कर 24 यक्षियों की कल्पना कर ली गई और उनका नाम शासन देवता रख दिया गया (यह बात दि० 15-9-81 के वीर में प्रकाशित श्री गणेशप्रसाद जी जैन के लेख में दिये वर्णन से भी प्रतिपादित होती है)। जैन संदेश दि० 24 मार्च 1977 में (डा. विश्वम्भर उपाध्याय के मत सहित प्रकाशित) "जैनधर्म में तांत्रिक प्रभाव" शीर्षक स्व० श्री अगरचन्द जी नाहटा के लेख में भी यही बताया गया है कि जैनधर्म में (दिगम्बर श्वेताम्बर दोनों में) शासन देव-देवियों की मान्यता मध्ययुग में हिन्दू तांत्रिकों के प्रभाव से आई थी। सोमदेव सूरि ने कि जो 11वीं सदी के लगभग अर्थात् भ० महावीर के 1600 वर्ष के बाद हुए, यशस्तिलक चम्पू के अन्तर्गत उपासकाचार में लिखा है, "ताः शासनाधिरक्षार्थं कल्पिताः परमागमे।" इससे भी प्रगट होता है कि शासनदेव वास्तविक नहीं हैं, कल्पित हैं। इसीलिए जब कल्पना ने मान्यता प्राप्त करली तब 13वीं शती व उसके बाद ही शासन देव पूजा सहित प्रतिष्ठा पाठ रचे गये। वर्तमान में प्रचलित शासन देव पूजाएँ उसी काल की हैं। शासनदेव पूजा के समर्थक विद्वानों ने पुराणों के उदाहरण दिये हैं उन्हें शास्त्र आम्नाय नहीं कहा जा सकता

जबकि कुंदकुंदाचार्य ने असंयमी को नमस्कार करने तक से मना किया है। पुराणों में तो चोर और व्यभिचारियों तक के वर्णन होते हैं, उससे यह आशय नहीं निकाला जा सकता कि अन्य लोग भी वैसे ही बन जावें।

(2) यह मानना ही गलत है कि आचार्य अकलंक देव, स्वामी समंतभद्र आदि पर आये उपसर्गों में किसी शासन देवी ने सहायता की। कथावार्ताओं में जो ऐसे उल्लेख हैं वे जैन सिद्धान्त के विपरीत हैं। पूर्वोक्त विद्वान बन्धु का यह कथन भी हास्यास्पद है कि मन्त्रों की साधना से सिद्धि तथा भगवान की पूजा का फल शासन देव-देवी ही देते हैं। जैन धर्म के कर्म सिद्धान्त की तो मान्यता ही यह है कि न कोई ईश्वर है, न कोई देवी-देवता कि जो हमें कुछ दे सकें या हमारे सहायक हो सकें। हमारी आत्मा में ही अनंत शक्ति है और उसमें श्रद्धा रखकर तथा मन्त्र, जप आदि व ध्यान की साधना द्वारा उसे जगाकर हम अनेक ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ पैदा कर सकते हैं। पूजा, भक्ति, ध्यान, जप, तप, मन्त्र साधना का फल भी संसार की वैज्ञानिक प्रक्रिया के अनुसार अपने आप मिलता है, उसके लिए किसी भी ईश्वर या देवी-देवता की आवश्यकता नहीं है। अतः यह कहना भी कि सिद्धियों के लिए देवी-देवताओं को सिद्ध करना पड़ता है, किसी अदृश्य शक्ति की सहायता के बिना कैसे संभव है—जैन सिद्धांत के सर्वथा विपरीत है। मेस्मरिज्म और हिप्नोटिज्म वाले किसी देवी-देवता में विश्वास नहीं करते—वे भी तो अनेक चमत्कार दिखाते हैं, उनमें वह शक्ति कहाँ से आती है ? परन्तु छद्मस्थों ने (जैसा कि अन्त में बताया गया है) जिस प्रकार सूर्य, चन्द्रमा आदि ग्रहों को खेंचने व ज्वार भाटा के लिए हजारों देवताओं की कल्पना कर डाली उसी प्रकार ऋद्धियों आदि का फल देने के लिए भी देवी देवताओं की कल्पना कर डाली। अस्तु यह मान्यता कि पद्मावती आदि शासन देव व अन्य धर्मों के देवी-देवता हैं और हमारे दुख दूर कर सकते हैं व हमारी मनोकामनाएँ पूरी कर सकते हैं, जैन धर्म के ही नहीं, वस्तु स्थिति के भी सर्वथा विपरीत हैं। पूर्वोक्त विद्वान बन्धु का यह लिखना भी सर्वथा मिथ्या है कि भगवान आदिनाथ ने श्मशान में जाकर तपस्या देव-सिद्धि के लिए की थी, जैन धर्मानुसार तो देव सिद्धि के लिए तपस्या करना, मन्त्रों की साधना करना तथा

सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के लिए धर्मध्यान करना मिथ्यात्व है। सम्यग्दृष्टि व्यक्ति जो भी धर्म साधन करता है निकांक्षित भाव से करता है। सिद्धियाँ तो अपने आप आती हैं परन्तु उसका लक्ष्य सिद्धियाँ प्राप्त करना नहीं होता। इस बात का तो और भी दुःख है कि जहाँ शासन देवों का अस्तित्व भी सिद्ध नहीं होता वहाँ उनके समर्थकों ने तांत्रिकों की नकल पर देवी-देवताओं को सिद्ध करने और मारण वशीकरण जैसे त्याज्य कार्य की साधना का भी विधान कर दिया। इस सम्बन्ध में बहुचर्चित "लघु विद्यानुवाद" को देखें।

(3) उपरोक्त से स्पष्ट है कि शासन के व धर्मात्माओं के रक्षक देवी-देवताओं का कोई अस्तित्व नहीं है। व्यक्ति ध्यान, मन्त्र, जप की साधना व धर्म सेवन करता है उसका फल भी तथा उससे प्राप्त हुई सिद्धि के उपयोग की क्षमता भी अपने आप प्राप्त होती है, उसके लिए भी किसी देवी देवता की सहायता की आवश्यकता नहीं है। फिर भी जो बन्धु शासन देवताओं के अस्तित्व में विश्वास करते हैं उनसे मेरा प्रश्न है कि जन्म से ही अतुल्य-बलशाली तीर्थंकरों पर मुनि अवस्था में उपसर्ग आये, भ. आदिनाथ को मुनि अवस्था में 6 मास तक आहार में अंतराय आया, सुकुमाल मुनि को स्यालनी खाती रही व अन्य अनेक धर्मात्माओं पर संकट आये, चन्द्रगुप्त मौर्य के समय 12 वर्ष का अकाल पड़ा तब जैन धर्म व जैन साधुओं पर बड़ा [भ]ारी संकट आया। बाद में धार्मिक असहिष्णुता के समय में हजारों जैन मन्दिर व मूर्तियाँ नष्ट कर दी गई; जैन साधु जीतेजी घाणी में पिलवा दिये गए, वर्तमान समय में भी कलकत्ता में जैन मुनि पर उपसर्ग आया, पुरलिया कांड तथा कुंभोज बाहुबली कांड भी हुआ। यदाकदा अरहंत प्रतिमाओं की चोरियाँ होती रहती हैं कि जिनके रक्षक शासन देव-देवी माने जाते हैं परन्तु न तो कभी किसी शासन देव-देवी ने आकर संकट दूर किया, न मंत्र तंत्र शक्ति द्वारा भक्तों की सांसारिक कामनाएँ पूरी करने का ढोंग करने वाले किसी साधु या तांत्रिक ने अपनी मंत्र तंत्र शक्ति का चमत्कार दिखाया। अनेक व्यक्ति जीवन भर पद्मावती क्षेत्रपाल की पूजा करते रहते हैं फिर भी दुखी दरिद्री बने रहते हैं। जयपुर में लूनकरनजी के मन्दिर में तो और

पद्मावती का ही छत्र चुराकर ले गये। क्या इससे यह सिद्ध नहीं है कि शासन देवों की तथा तंत्र मंत्र शक्ति सम्बन्धी मान्यता मिथ्या है, धर्म व धर्मात्माओं की रक्षक पद्मावती, क्षेत्रपाल या कोई भी और शक्ति नहीं है तथा स्वामी समतभद्र मुनि मानतुंग आदि के भी उपसर्ग दूर हुए वे स्वयं की योग शक्ति से दूर हुए न कि किसी देवता की सहायता से? इसके अतिरिक्त कई तीर्थंकरों को तो सैकड़ों व हजारों सागरों का समय व्यतीत हो चुका है, यदि उनसे सम्बन्धित कथित यक्ष यक्षियाँ वास्तविक भी होतीं तो भी उनमें से कई की तो आयु समाप्त होकर उनकी देव पर्याय भी अब नहीं रही। कल्पित कथा के अनुसार धरणेन्द्र और पद्मावती ने भ० पार्श्वनाथ पर कमठ द्वारा किये उपसर्ग को दूर किया उस समय वे केवल मुनि अवस्था में थे परन्तु अंध भक्तजन उनकी केवली अवस्था की प्रतिमाएँ भी पद्मावती के सिर पर और ऊपर धरणेन्द्र का फण, बनवाकर उन्हें पूज रहे हैं?

(4) शासन देवों की मान्यता के समर्थन में यह भी कहा जाता है कि दूसरे धर्मों के देवताओं को पूजने से तो अपने देवता को पूजना अच्छा है। सो वैसे तो जहर चाहे अपने घर का खावो चाहे दूसरे का या बाजार से लाकर खावो, मृत्यु ही होगी। परन्तु जब शासन देवों का अस्तित्व ही नहीं है और जैसा कि मैं आगे बताऊँगा, अन्य धर्मों के देवताओं का भी अस्तित्व सिद्ध नहीं होता, तो उनके पूजने की क्या सार्थकता है, वह तो मिथ्यात्व है। इसी प्रकार शासन देवों की मान्यता के समर्थक विद्वान यह भी कहते हैं कि हम उन्हें अरहंतों के समान मानकर थोड़े ही पूजते हैं, हम तो उनके प्रति साधर्मी वात्सल्य दिखाते हैं। सो इसका भी उत्तर है कि जब शासन देवों का अस्तित्व ही सिद्ध नहीं होता तो साधर्मी वात्सल्य किसका? यह तो मूढ़ता है। यदि यह भी मान लिया जावे कि शासन देव-देवियों का अस्तित्व है तो साधर्मी वात्सल्य तो तब कहा जा सकता है कि जब उनसे कोई मनोती व कामना की पूर्ति न चाही जाती हो। परन्तु शासन देवों का पूजक कोई भी ऐसा नहीं है कि जो किसी कामना या मनोती के बिना पूजता हो। पूजा भी उसकी की जाती है कि जो पूज्य होता है, जहां साधर्मी वात्सल्य मात्र दिखाया जाता है, वहाँ उसकी पूजा नहीं की जाती जबकि पद्मावती आदि की तो

मन्दिर में मूर्ति स्थापित कर द्रव्य पूजन व आरती तक की जाती है। असल में शासन देवों की तो पूज्य भाव से ही पूजा की जाती है। उसे साधर्मी वात्सल्य कहना मात्र धोखा है, मिथ्यात्व है।

मनोतियाँ कैसे पूरी होती हैं—यहाँ यह प्रश्न पैदा होता है कि यदि शासन देवों का अस्तित्व ही नहीं है तीर्थंकर प्रतिमाओं में भी अतिशय या चमत्कार नहीं है तो उनकी मनोतियाँ करने से लोगों की कामनाएँ कैसे पूरी हो जाती हैं। अन्य धर्म वाले देवताओं की मनोतियाँ भी कैसे पूरी हो जाती हैं?

उत्तर—(1) जो लोग इनकी मनोतियाँ नहीं करते क्या उनके काम सिद्ध नहीं होते?

(2) मनोतियाँ करने वालों में भी किसी के देवता हिन्दू हैं, किसी के जैन हैं, कोई पीरजी की मनोती करता है, कोई किसी कब्र की करता है। हिन्दू कहता है कि मेरे ही देवता वास्तविक हैं और सब कल्पित। इसी तरह और भी अपने अलावा दूसरों के देवताओं को कल्पित बताते हैं। शासन देवों की मान्यता के समर्थक जैनी कहते हैं कि जैन धर्म ही सच्चा धर्म है अतः सृष्टि नियमानुसार स्वर्गों में भी जैन शासन के रक्षक देव हैं, और धर्म झूठे हैं अतः स्वर्गों में उनके धर्मों के रक्षक देव नहीं हो सकते। तो सभी धर्मों के मानने वाले अपने-अपने देवताओं की मनोतियाँ करते हैं, वे कैसे पूरी हो जाती हैं।

(3) मनोती करने वालों की कई मनोतियाँ असफल क्यों होती रहती हैं। **किसी भी देवता या अरहंत प्रतिमा का ऐसा कोई भी भक्त नहीं है कि जिसकी सभी मनोतियाँ पूरी हो जाती हैं** प्रत्युत जो देवी-देवताओं को नहीं मानते उनके मुकाबले में भी उनको मानने और मनोती करने वाले असफल हो जाते हैं। यदि देवी-देवता वास्तविक हैं और अरहंत प्रतिमाएँ भी चमत्कारपूर्ण हैं तो उनकी मनोती करने वालों को अन्य लोगों के समान बुद्धि का उपयोग व किसी प्रकार का प्रयत्न किये बिना ही तथा जो-जो भी मनोतियाँ की हैं उन सभी में सफलता मिलनी चाहिए। परन्तु ऐसा होता

नहीं, उनको भी बुद्धि का उपयोग व सब प्रयत्न करना ही पड़ता है तथा देवी-देवताओं को न मानने वाले लोगों की तरह ही बुद्धि का उपयोग व सब तरह से प्रयत्न करने पर भी, देवी-देवताओं को मानने व उनकी मनोती करने वाले लोग, देवी-देवताओं को न मानने वालों के मुकाबले में भी असफल हो जाते हैं। तात्पर्य यह है कि जब जैन शासन के व अन्य धर्म वालों के देवी-देवताओं की मनोती करने वालों को भी मनोती न करने वालों के समान सब प्रयत्न व बुद्धि का उपयोग करना पड़ता है तथा फिर भी अन्य लोगों के समान ही उन्हें कभी सफलता मिलती है और कभी नहीं मिलती तो सफलताओं का श्रेय इस बुद्धिवादी व वैज्ञानिक युग में उन देवी देवताओं को देना अविवेकपूर्ण ही है। मुस्लिम-युग का लम्बा इतिहास इसका साक्षी है। महमूद गजनवी ने सोमनाथ के मन्दिर की मूर्ति को तोड़ा, तब न तो वह मूर्ति अपनी रक्षा कर सकी, न अन्य देवी-देवता। यज्ञ, मन्त्र, जप, देवी-देवता आदि ने किसी भी अत्याचारी का बाल भी बांका नहीं किया। हमारे देश के चुनावों में भी हम देखते रहे हैं कि कई उम्मीदवार विंध्यवासिनी देवी वैष्णव देवी, तिरुपति, बैलारी की दरगाह आदि की मनोतियाँ करते हुए और इस सम्बन्ध में बड़े-बड़े तांत्रिकों की सहायता लेते हुए तथा यज्ञ व हवन कराते हुए भी चुनाव में हार जाते हैं। राजस्थान पत्रिका दि० 2-8-82 में प्रकाशित समाचार के अनुसार जाधपुर के एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त ज्योतिषी व तांत्रिक जो अपने आपको भगवान शंकर का अवतार कहता था के आलीशान भवन पर आयकर विभाग वालों ने छापा मारकर 30 लाख रुपये बरामद कर लिए परन्तु उस तांत्रिक की मंत्र तंत्र विद्या के नाटक ने कोई काम नहीं दिया। ऐसे अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं।

जैन बन्धुओं की चमत्कारी प्रतिमाओं तथा शासन देव-देवियों के सम्बन्ध में तो पिछले पृष्ठों में लिखा ही जा चुका है। इससे सिद्ध है कि अरहंत प्रतिमाओं में चमत्कार और शासन देव व अन्य धर्मों के देवी-देवताओं का अस्तित्व मानना और इनकी मनोती से सांसारिक कामनाएँ पूरी होना मानना मिथ्या है। जिनका अस्तित्व ही नहीं है वे मनोतियाँ कैसे पूरी कर सकते हैं।

शासन देव-देवियों के समर्थक विद्वानों से प्रश्न :

फिर भी जो बन्धु शासन देव-देवियों के अस्तित्व को मानते हैं उनसे मैंने नवम्बर सन् 1981 में जैन पत्रों द्वारा निम्नानुसार प्रश्न पूछे थे—

1. भक्तों ने अपने-अपने मन में क्या-क्या मनोतियाँ की हैं, इसका ज्ञान हो जाना मनःपर्यय ज्ञान का विषय है और जैन धर्मानुसार मनःपर्यय ज्ञान केवल उत्तम ऋद्धिधारी भाव मुनियों को ही होता है। यदि आप यह मानते हैं कि जहाँ-जहाँ भी उनके भक्त हैं उन हजारों भक्तों की मनोतियों की जानकारी शासन देव-देवियों को हो जाती है तो इसमें क्या युक्ति तथा शास्त्र प्रमाण है ?

(2) शासन देव, देवियों की जहाँ-जहाँ भी भक्त लोग मूर्तियां बनाते हैं, क्या उन्हें उनका पता लग जाता है और वे देवी-देवता उन सब मूर्तियों में प्रवेश कर जाते हैं ? यदि नहीं तो उन मूर्तियों से उन देवी-देवताओं का किस प्रकार का सम्बन्ध रहता है ? जो भी स्थिति रहती हो उस बाबत युक्ति तथा शास्त्र प्रमाण दोनों देवें।

(3) शासन देव-देवी जगह-जगह फैले हुए अपने हजारों भक्तों की मनोतियाँ किस प्रकार पूरी करते हैं और सब जगह कैसे पहुँच जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक भक्त ने चुनाव या मुकदमा जीतने की मनोती की हो तो क्या शासन देव, देवी हजारों लाखों मतदाताओं या जज के मन को प्रभावित करके उनकी राय को ही बदल देंगे ? यदि ऐसा है तब तो वे ईश्वरवादियों के अंतर्यामी और सर्वशक्तिमान ईश्वर से भी अधिक शक्तिमान हो गये ? यदि एक दूसरे के विरोधी दोनों पक्षों ने उनकी मनोतियाँ की हों तो दोनों में से किसे जितावेंगे ? यदि किसी ने अपने लड़का पैदा होने की मनोती की हो तो क्या शासन देव-देवी उसके भ्रूण को ही बदल देंगे या गर्भ रहने पूर्व ही कर्म फल को ही बदल देंगे ? युक्ति तथा शास्त्र प्रमाण दोनों देवें।

ये प्रश्न अन्य धर्म वाले देवी-देवताओं पर भी लागू होते हैं कि जिनकी मनोतियाँ की जाती हैं। खेद है मेरे इन प्रश्नों का तर्कसंगत उत्तर

अभी तक किसी भी शासन देव-देवियों की मान्यता के समर्थक विद्वान ने नहीं दिया।

चुनौती––सर्वविदित है कि रिखबदेवजी तथा अंतरिक्ष पार्श्वनाथजी में निर्ग्रन्थ भगवान पर रोज नेत्र लगाये जाते हैं, आंगी रचना की जाती है तथा वे रोज हटा दिये जाते हैं। अंतरिक्षजी में तो भगवान की निर्ग्रंथ प्रतिमा के ऊपर कटिसूत्र भी बना दिया गया है। भगवान पर यह आशातना व उपसर्ग वर्षों से हो रहा है। उनकी शासन देवियाँ चक्रेश्वरी और पद्मावती यह उपसर्ग क्यों होने दे रही हैं? इसके अतिरिक्त आजकल यदाकदा मंदिरों में से भगवान की प्रतिमाओं की चोरी होती रहती है। चोर प्रतिमाओं को काट देते व गला डालते हैं। यह भी शासन पर वर्तमान में नया संकट पैदा हो गया है। मेरा निवेदन है कि वे सब बन्धु व बहिनें अपनी-अपनी मान्यता के अनुसार क्षेत्रपाल, पद्मावती, ज्वालामालिनी, चक्रेश्वरी, आदि से प्रार्थना करें। लघु विद्यानुवाद के संग्रहकर्ता कथित गणधर कुंथुसागरजी तथा मन्त्र-तन्त्र विद्या के ज्ञाता अन्य साधु व विद्वान उनका भी प्रयोग करें सिद्धचक्र, इन्द्रध्वज विद्यानादि करावें कि शासन देव-देवी रिखबदेवजी व अंतरिक्ष पार्श्वनाथजी में भगवान पर हो रहे इस उपसर्ग को दूर करें तथा जहाँ कहीं भी चोर भगवान की प्रतिमाओं कोचुराने जावें उनके हाथ पैर जाम हो जावें, आँखों से उन्हें दीखे नहीं ताकि वे प्रतिमा को चुरा न सकें। मैं समझता हूँ कि यदि शासन देव-देवी वास्तव में हैं और साधुओं में भी मंत्र-तंत्र शक्ति है और जब वे एक-एक भक्त की मनोतियाँ भी पूरी करते रहते हैं तो सब भक्त गण उनसे भगवान के इस उपसर्ग को तथा शासन पर आये संकट को दूर करने को प्रार्थना करेंगे तो उनकी तो मांग अवश्य ही पूरी करेंगे। यदि प्रार्थना सफल नहीं होती है तो क्या उससे प्रमाणित नहीं हो जावेगा कि शासन देव-देवी आदि हैं ही नहीं, न साधुओं व तांत्रिकों में मंत्र-तंत्र शक्ति है?

चमत्कारों सम्बन्धी भ्रम––खेद है इस बुद्धिवादी व वैज्ञानिक युग में भी लोग चमत्कारों के नाम पर बहुत धोखा खाते हैं। चमत्कार दो तरह के होते हैं, एक बुद्धि के आधार पर, दूसरे संकल्प शक्ति के आधार पर।

जादूगरों द्वारा हाथ की सफाई व वैज्ञानिक ट्रिक के द्वारा जो चमत्कार दिखाये जाते हैं वे पहली प्रकार के होते हैं तथा मेस्मरिज्म, हिप्नोटिज्म व योग शक्ति से जो चमत्कार दिखाये जाते हैं वे दूसरी प्रकार के होते हैं। परन्तु आजकल अधिकांश चमत्कार हाथ की सफाई या वैज्ञानिक ट्रिक मात्र होते हैं और जो लोग उन्हें दैवी या मन्त्र आदि की शक्ति से हुए बताते हैं वे लोगों को धोखा देते हैं। उदाहरण के लिए––यदि आप एक फोटो पर लेक्टिक एसिड के कुछ रवे घिस दें और उसे थोड़ी देर के लिए छोड़ दें तो फोटो पर विभूति (भभूत) जमी हुई पावें। पर इसे एक महात्मा की मन्त्र या दैवी शक्ति से हुआ मानकर प्रचार किया जा रहा है। इसी प्रकार नवम्बर सन् 1977 में जयपुर में लालजी सांड के रास्ते में स्थित एक दिगम्बर जैन मन्दिर में दो छत्र 55 घण्टे तक हिलते रहे। छत्रों के हिलने का वैज्ञानिक कारण तो मात्र इतना ही था कि उनके नीचे दो दीपक जल रहे थे और उनकी लौ से हवा गर्म होकर ऊपर उठती थी और उससे छत्र हिलते थे परन्तु भक्त लोगों ने उसे देवी चमत्कार माना। इस प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं कि लोग चमत्कार के वैज्ञानिक कारण पर विचार न कर सहसा उसे देवी शक्ति से हुआ मान लेते हैं।

संकल्प शक्ति का महत्व––हमारी आत्मा में अनन्त शक्ति है, यदि हमारी उसमें श्रद्धा हो और एकाग्रता (ध्यान) की साधना द्वारा अपनी संकल्प शक्ति को बढ़ालें और उसके साथ भावना को भी जोड़ लें तो हम अनेक चमत्कार दिखा सकते हैं। जिस प्रकार एक चश्मे या नतोदर काच को सूर्य के सामने रखने पर आग पैदा हो जाती है उसी प्रकार एकाग्रता (ध्यान) के अभ्यास से भी संकल्प शक्ति (Will Power) पैदा होकर उससे जनेक चमत्कार दिखाए जा सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की संकल्प शक्ति की क्षमता उसकी साधना के अनुसार अलग अलग होती है। स्वामी समंतभद्र अपने इष्टदेव का (जो मुक्त हो गये और स्वयं आकर दर्शन नहीं दे सकते) स्वरूप साक्षात् सा प्रगट कर सके तथा अन्य मुनियों के कई चमत्कारों का शास्त्रों में वर्णन है वह उनकी संकल्प शक्ति का ही चमत्कार था। अन्य धर्मावलम्बी साधकों को उनके इष्ट देवों द्वारा दर्शन देने की मान्यताएँ हैं उनमें भी यही

सिद्धान्त निहित है। एकाग्रता की साधना की अनेक विधियाँ हैं—मन्त्र जप, नासिकाग्र व हृदयकमल आदि पर दृष्टि स्थिर करना, प्राणायाम व आने जाने वाले श्वास पर ध्यान रखना आदि। नेत्रों तथा श्वास का मन की एकाग्रता से घना सम्बन्ध है। जिसके नेत्र पलक नहीं मारते उसका मन भी एकाग्र हो जाता है। आजकल उसे त्राटक सिद्धि कहते हैं। त्राटक सिद्धि अरहंत प्रतिमा पर दृष्टि को स्थिर करके भी की जा सकती है। अरहंतों के नेत्र पलक नहीं मारते, उन्हें साधना द्वारा आत्मस्वरूप में पूर्ण व स्थायी एकाग्रता प्राप्त हो जाती है। बारह भावना आदि का पाठ, अखण्ड पाठ तथा स्वाध्याय भी यदि इस सावधानीपूर्वक किये जावें कि उस समय मन में और कोई विचार न आवे तो उनके द्वारा भी एकाग्रता (ध्यान) की साधना की जा सकती है प्रत्युत साधारण लोगों के लिए यह विधि अधिक सरल व आकर्षक है और यदि उसे संगीत का रूप दिया जावे तो और भी अधिक। संगीत की ध्वनि का बड़ा प्रभाव पड़ता है। तानसेन ने मल्हार राग गाकर पानी बरसा दिया था। इससे कई प्रकारके रोग मिटजाते हैं। मृग शिकारी के जाल में फंसकर अपने प्राण गंवा देता है, सर्प भी तन्मय होकर नाचने लगता है। मंत्रों की ध्वनि का भी महत्व है। यदि नियत ध्वनि से विधिपूर्वक जप किया जावे तो उससे मन तो प्रभावित होता ही है, शरीर में भी कंपन पैदा होकर रोम रोम प्रभावित हो जाता है और कई रोग भी मिट जाते हैं वायु-मंडल भी प्रभावित होता है परन्तु सबसे अधिक महत्व व्यक्ति की एकाग्रता व संकल्प शक्ति का होता है।

श्रद्धा का महत्व—संकल्प शक्ति तभी पैदा होती है कि जब उस मंत्र में श्रद्धा हो। श्रद्धा से संकल्प शक्ति पैदा होती है और एकाग्रता के अभ्यास से बढ़ती है। तीर्थंकर प्रतिमाओं, शासनदेव-देवियों व अन्य देवी देवताओं की भी मनोतियाँ वास्तव में मनोती करने वाले व्यक्ति की श्रद्धा के कारण पूरी होती हैं। अज्ञानी लोग उसे उन कल्पित देवी-देवताओं का चमत्कार मान लेते हैं। जिनमें श्रद्धा नहीं होती उनकी मनोतियाँ पूरी नहीं होतीं। तात्पर्य यह है कि महत्व श्रद्धा का है। अपनी आत्मा की अनंत शक्ति में जिनकी श्रद्धा नहीं होती वे अज्ञानवश अरहंत प्रतिमाओं में अतिशय की व अन्य

मूर्तियों में देवी-देवताओं की कल्पना करके उनमें श्रद्धा पैदा कर लेते हैं। एकलव्य द्रोणाचार्य की मूर्ति बनाकर और उसमें श्रद्धा करके धनुष विद्या में पारंगत हो गया। हम बहुधा देखते हैं कि लोग भैरूजी बालाजी आदि की मूर्तियाँ स्थापित करके उन्हें पूजने लग जाते हैं और उनसे उनकी मनोतियाँ पूरी होने लग जाती हैं। जैन धर्म कहता है कि वास्तविकता को समझो। न तो अरहंत प्रतिमाओं में अतिशय होता है, न अन्य देव-देवियों का अस्तित्व है। यदि तुम अपनी आत्मा की अनंत शक्ति में श्रद्धा करो और एकाग्रता की साधना द्वारा संकल्प शक्ति को बढ़ावो तो उससे तुम्हें कई सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं। जहाँ एकाग्रता की साधना से प्राप्त संकल्प शक्ति की क्षमता नहीं होती वहाँ मंत्र, जप, अखंडपाठ, कीर्तन आदि का कोई फल नहीं होता। मल्हार राग गाकर तानसेन ने पानी बरसा दिया था परन्तु वर्तमान में कई बार प्रयत्न किये गये परन्तु मल्हार राग गाकर कोई भी पानी बरसाने में समर्थ नहीं हुआ। णमोकार मंत्र के चमत्कारों के सम्बन्ध में शास्त्रों में अंजन चोर आदि की कथाएं हैं परन्तु वैसे चमत्कार दिखाने वाला आज कोई नहीं है। मुनि मानतुंग ने तो भक्तामर स्तोत्र के जाप से 48 ताले तोड़ दिये परन्तु वर्तमान में उसी के जाप से कोई एक भी ताला तोड़ने में समर्थ नहीं है। 10 से 14 मई 1982 को जयपुर में चूलगिरि पर पंचकल्याण प्रतिष्ठा हुई थी। उस समय उसकी निर्विघ्न समाप्ति के लिए प्रतिष्ठाचार्यों द्वारा मंत्र जप होमहवन पूर्वक विश्वशांति यज्ञ किया गया। शासन देवों का आह्वान किया गया। क्षेत्रपाल पद्मावती को स्थापित कर उनकी भी पूजा की गई। परन्तु दि. 14-5-82 को भयंकर तूफान और वर्षा ने बड़ी बरबादी कर दी, तंबू उखड़ गये और उनमें ठहरे हुए हजारों भाइयों को बड़ा कष्ट हुआ। पीछी का चमत्कार दिखाने वाले आचार्य महाराज स्वयं अपने को बचाने को बेचैन हो गये। न तो पद्मावती आदि शासन देव-देवी रक्षा को आये, न क्षेत्र का अतिशय काम में आया। प्रतिष्ठाचार्यों की मंत्र साधना निष्फल रही। तात्पर्य यह है कि श्रद्धा तथा साधना से प्राप्त होने वाली संकल्प शक्ति की आवश्यक क्षमता के बिना कोरा मंत्र तंत्र कोई काम नहीं देता।

भावना का महत्व—एकाग्रता (ध्यान) की साधना से केवल शक्ति सिद्धि पैदा होती है। उसका उपयोग करने के लिए उसे भावना के साथ जोड़ना पड़ता है और तदनुसार ही उसका फल होता है। इसीलिए शास्त्रों में कहा है—"यादृशी भावना यस्य सिद्धिः भवति तादृशी"। शास्त्रों में वर्णन है कि मुनि विष्णुकुमार को सिद्धि हो गई थी परन्तु उन्हें पता नहीं था। जब उनसे कहा गया और उनने उपसर्ग निवारण की भावना की तो मुनियों का उपसर्ग दूर हो गया। इस प्रकार सिद्धि अपने आप कोई कार्य नहीं करती जब तक उसे भावना के साथ न जोड़ा जावे। डा. भागचन्द्र जी जैन, अधीक्षक जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय ने भी लिखा है "मंत्र में गर्भित भाव से अनपेक्षित कार्य सिद्धि कैसे संभव है, हाँ उसका उपयोग गलत रूप में किया जावे तो दूसरी बात है।" महर्षि पातंजलि ने भी योगदर्शन में लिखा है कि मंत्र के जप के साथ उसके अर्थ की भी भावना करनी चाहिए। इससे प्रगट है कि मंत्रजप के समय उसके अर्थ की भी भावना करनी चाहिए तथा उसका फल भी उस भावना के अनुरूप ही होगा, उसके बाहर नहीं जा सकता। अस्तु, णमोकारमंत्र, भक्तामर स्तोत्र आदि का जप यदि उनमें गर्भित भाव पर ही ध्यान रखकर किया जावेगा तो उसका प्रभाव उस भाव तक ही सीमित रहेगा, उसके चिंतवन से होने वाली आत्मशुद्धि ही होगी। यह अवश्य है कि उस व्यक्ति के असाता कर्म का उदय हुआ तो उस आत्मशुद्धि के अनुरूप वह तीव्र से मंद हो जावेगा, उस व्यक्ति को दुःख ही नहीं प्रतीत होगा या कम प्रतीत होगा। परन्तु उस आत्मशुद्धि के परिणाम स्वरूप सांसारिक कामनाएँ अपने आप पूरी नहीं हो सकतीं। यह मिथ्यात्व का प्रचार है कि णमोकार मंत्र व भक्तामर स्तोत्र के जप व पाठ के प्रभाव से सब विघ्न रोग आदि नष्ट हो जाते हैं व सांसारिक कामनाएँ पूरी हो जाती हैं। ऐसे लोग ढोंग तो करते हैं णमोकार मंत्र आदि के जप का और भावना रखते हैं सांसारिक कामनाएँ पूरी होने की। उस समय तीव्र असाता कर्म का उदय न होने पर, जो भावना जपकर्ता के स्वयं के शरीर और मन को प्रभावित करने को की जाती है (जैसे रोग निवारण आदि) यदि वह एकाग्रतापूर्वक नियमित रूप से की जावे तो उसमें अधिकाँश सफलता मिल

भी जाती है। इसे autosuggestion कहते हैं। परन्तु जहाँ पर-जीव या पर-वस्तु को प्रभावित करने की भावना होती है वहाँ सफलता प्रभावित करने वाले व्यक्ति की ध्यान की साधना द्वारा प्राप्त संकल्प शक्ति की क्षमता के अतिरिक्त उस जीव या वस्तु की क्षमता पर भी निर्भर होती है। अतः सफलता न मिलने पर अज्ञानी लोगों की धर्म पर से श्रद्धा डिग जाती है।

इससे सिद्ध है कि मंत्र के शब्दों से भी अधिक महत्व उस भावना का होता है कि जो मंत्रजप के समय ध्यान में होती है और उससे भी अधिक महत्व जपकर्ता की संकल्प शक्ति का होता है तथा असाता कर्म का तीव्र उदय हुआ तो मंत्रजप, भावना और संकल्प शक्ति का भी कोई प्रभाव नहीं होता।

सांसारिक कामनाओं के लिए मंत्रशक्ति का प्रयोग धर्म विरुद्ध—ध्यान की साधना द्वारा प्राप्त शक्ति की सार्थकता केवल आत्म-शुद्धि तथा उपसर्ग आदि के समय धर्म रक्षा के लिए है, सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के लिए नहीं। मंत्र, तंत्र की साधना भी एकाग्रता बिना नहीं हो सकती। अतः वह भी ध्यान की ही एक विधि है तथा जहाँ वह साधना सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के लिए की जाती है, वह आर्तध्यान या रौद्र-ध्यान ही हो सकती है, धर्म ध्यान नहीं हो सकती। अतः सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के लिए मंत्रों आदि का उपयोग प्राचीन शास्त्रों में कहीं नहीं बताया गया है। महर्षि पातंजलि ने भी योगदर्शन में सचेत कर दिया है कि सिद्धियों का उपयोग करना आत्मकल्याण में बाधक बनता है। मंत्रों द्वारा सांसारिक कामनाओं की पूर्ति की कथाएं तो मध्ययुग में भट्टारकों द्वारा रची गई थीं। जब असाता कर्म का तीव्र उदय हो उस समय तो मंत्रजप आदि कुछ कर ही नहीं सकते। मंद उदय के समय पाँच समवायों के होने पर मंत्रजप आदि से कुछ सफलता मिल भी जावे (जिस प्रकार सारा ध्यान लगाकर बिल्ली चूहे को पकड़ने में और बगुला मछली को पकड़ने में सफल हो जाते हैं) परन्तु उससे अधर्म ही होता है। जो साधु उपदेश देते हैं कि णमोकार मंत्र व भक्तामर स्तोत्र के जाप से सांसारिक कामनाएँ पूरी हो

जाती हैं, अपने भक्तों की सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के लिए मंत्रतंत्र करते हैं, गृह-शांति यज्ञ, सिद्ध चक्र व इन्द्रध्वज विधानादि करने की प्रेरणा देते हैं, मारण, वशीकरण, जुआ में जीतना, खटमल मच्छर की शान्ति आदि के लिए तंत्रमंत्र की साधना तथा मांस विष्ठा आदि अभक्ष्य वस्तुओं का उपयोग बताने वाले लघुविद्यानुवाद, अनाहत यंत्रमंत्र विधि, स्वास्थ्य बोधामृत जैसे ग्रंथ लिखते व प्रकाशित कराते हैं वे धर्म का अवर्णवाद करते हैं, उनका मंत्रतंत्र आर्तध्यान या रौद्रध्यान है तथा अधर्म ही है। अतः सही मार्ग तो यही है कि बिना किसी सांसारिक कामना के अरहंतों की उपासना की जावे और असाता का उदय होने पर उसे समभावपूर्वक सहन किया जावे।

होम, हवन सम्बन्धी मिथ्यात्व—होम, हवन करने की जैन सिद्धांत से कोई संगति नहीं है। यह विकृति तो जैन धर्म में वैदिक धर्म के प्रभाव से आई है। हवन और यज्ञोपवीत का सबसे पहले वर्णन आचार्य जिनसेन के आदि पुराण में मिलता है जो ईसा की नवीं शताब्दी में अर्थात् भ० महावीर के 1300 वर्ष बाद हुए। वह समय जैन धर्मावलंबियों के लिए बड़ा संकट का था अतः आचार्य जिनसेन को परिस्थिति वश धर्म रक्षार्थ वैदिक धर्म के हवन, यज्ञोपवीत आदि क्रियाकांडों की जैनियों के लिए भी सृष्टि करनी पड़ी। इसमें हिंसा तो होती ही हैं। इसके अतिरिक्त आज के महंगाई के समय में दूध, घी, मेवा, अनाज आदि को आग में जलाकर धर्म मानना किसी भी प्रकार उचित नहीं है जबकि हमारे देश में करोड़ों लोगों को घी की बूंद भी चखने को नहीं मिलती। हवन वायु मंडल को शुद्ध करने को किया जाता है यह भी झूठी दलील है। यदि ऐसा होता तो हवन गंदी बस्तियों में किये जाते न कि स्वच्छ मैदानों में। तथा घी, शक्कर, मेवा आदि खाद्य पदार्थों को जलाने के बजाय नीम की पत्तियाँ, गूगल आदि जलाई जातीं, क्योंकि नीम की पत्तियाँ तो वैसे भी बेकार जाती हैं। मानव के स्वास्थ्य के लिए भी जहाँ वायु मंडल में ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है, हवन से तो ऑक्सीजन की कमी होकर कार्बन डाइ-ऑक्साइड गैस बनती है अतः हवन से तो हानि ही है। अतः सिद्धचक्रादि विधानों में हजारों रुपये की

सामग्री जला दी जाती है वह तो धर्म के नाम पर अधर्म ही है और राष्ट्रीय अपव्यय है।

प्रसिद्ध विद्वान स्व. पं. चैनसुखदास जी न्यायतीर्थ ने दि. 3-8-66 के 'वीरवाणी' के सम्पादकीय में लिखा था कि "हवन के विषय में यह कहना कि इससे वायु शुद्ध होती है और बादल बनकर वर्षा आ जाती है बिलकुल बेबुनियाद तो है ही हास्यास्पद भी है। यदि आग में घी जलाने से वर्षा आ जाती तो हमारे देश में समस्या, पचीस्या, चोतीस्या और छपन्या जैसे भयंकर दुर्भिक्ष कभी न पड़ते।..........यदि हवन पानी ला सके तो वर्षा हर समय और हर क्षेत्र में आसान हो जावेगी और कोई भी हवन का विरोध करने का साहस नहीं कर सकेगा।..........ग्रह आदि के प्रकोप को शांत करने के अन्ध विश्वास से प्रेरित होकर भी बहुत से भाई बहिन हवन के चक्र में फँस जाते हैं। कुछ वर्षों पहले छह ग्रह और उसके बाद आठ ग्रह के एक जगह इकट्ठे होने की विभीषिका ने देश के लाखों रुपये हवन के नाम पर बरबाद करवाये थे। कर्म सिद्धांत पर अटल विश्वास रखने वाले जैन धर्म में ऐसी चीजों का मेल कैसे बैठ सकता है..........।" चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में उत्तर भारत में 12 वर्ष का अकाल पड़ा था। यदि मंत्र तंत्र हवन करके ही वर्षा लाई जा सकती हो तो हमारे उस समय के पूर्वज 12 वर्ष तक अकाल का दुःख क्यों सहते रहते। वर्तमान में भी वर्षा न होने पर जहाँ कहीं भी हवन यज्ञ आदि किये जाते हैं उनका कोई असर नहीं होता। उदाहरण के लिए जून 1983 के संगम में प्रकाशित समाचार के अनुसार कन्याकुमारी में वर्षा के लिए 10 दिन तक होम यज्ञ होता रहा और 6 ब्राह्मण गले तक पानी में खड़े होकर वर्षा के लिए प्रार्थना करते रहे परन्तु पानी नहीं बरसा। पं. फूलचन्द जी सिद्धान्त शास्त्री वाराणसी ने लिखा है "हवन की परिपाटी का जैन परम्परा से कोई सम्बन्ध नहीं है।.......... यह नवीं शताब्दी से चालू हुई जान पड़ती है।" महा विद्वान स्व० पं० बेचरदास जी दोशी ने भी जैन जगत सितम्बर 1961 में लिखा था "होम-हवन, ग्रह पूजन, दिग्पाल पूजन——ये सब प्रक्रियाएँ वैदिक परम्परा की हैं।.......... जड़ कर्मकांड एक न एक दिन नष्ट होकर रहेंगे..........अतः हमें समय रहते भ्रांत एवं निरा-

धार पद्धतियों की जगह हमें विकासोन्मुख करने वाली पद्धतियाँ चालू करें इसी में सबका भला है।"

परीक्षा प्रधानी बनो—जैनधर्म एक परीक्षा प्रधानी धर्म है। दि. जैन आचार्य स्वामी समंतभद्र, श्वेताम्बर आचार्य हरिभद्र सूरि आदि अनेक प्राचीन आचार्यों ने तो लिखा ही है, वर्तमान में भी पं. टोडरमल जी ने मोक्षमार्ग प्रकाशक के सातवें अधिकार में लिखा है, "परीक्षा करके जिन वचन की सत्यता पहचानकर जिन आज्ञा मानना योग्य है, बिना परीक्षा किये सत्य असत्य का निर्णय कैसे हो।…… ……बिना परीक्षा किये केवल आज्ञा ही द्वारा जो जैनी हैं उन्हें भी मिथ्यादृष्टि जानना।" शास्त्र लिखना भ० महावीर के लगभग 600 वर्ष बाद चालू हुआ था और वे रचनाकार छद्मस्थ थे, सर्वज्ञ तो दूर श्रुतकेवली भी नहीं थे। पुराण तथा कथा ग्रन्थ तो उनके भी लगभग 600 वर्ष बाद लिखे गये। ऐसी स्थिति में उनके लिए कैसे माना जावे कि वे सर्वज्ञ की वाणी हैं। अतः हमें पुराणों आदि की कथाओं को आजकल के उपन्यास और कहानियों की तरह मानना चाहिए न कि सर्वज्ञ की वाणी। उनके पात्र ऐतिहासिक हो सकते हैं जैसे कि ऐतिहासिक उपन्यासों के होतेहैं। धरणेन्द्र पद्मावती व अन्य शासन देव-देवियों की कथाएं तो और भी बहुत बाद में रची गईं और भट्टारक सोमदेव सूरि ने उन्हें कल्पित ही बताया है।

इसके अतिरिक्त वर्तमान वैज्ञानिक खोजों ने हमारे शास्त्रों में आये स्वर्ग नरक आदि सम्बन्धी वर्णनों पर भी प्रश्न चिह्न लगा दिया है। उदाहरण के लिए, सूर्य चन्द्रमा आदि ग्रहों के सम्बन्ध में भट्ट अकलंक देव के तत्वार्थ राजवार्तिक के चौथे अध्याय के बारहवें सूत्र के दसवें वार्तिक में लिखा है कि वे देवताओं के विमान पृथ्वी पर स्थित सुमेरु पर्वत के चारों ओर चक्कर लगाते रहते हैं। सूर्य के विमान को सोलह हजार देवता, चन्द्रमा के विमान को भी इतने ही देवता सिंह, हाथी, बैल और घोड़े का रूप बनाकर खेंचते हैं तथा अन्य ग्रहों व नक्षत्रों के विमानों को चार चार हजार देवता तथा तारों के विमानों को दो दो हजार देवता खेंचते हैं। तत्वार्थ सूत्र के श्वेताम्बर सम्प्रदाय में मान्य भाष्य के चौथे अध्याय के 14 वें सूत्र की

सिद्धसेनीय वृत्ति में भी लगभग इसी प्रकार का वर्णन है। परन्तु आधुनिक वैज्ञानिक खोजों के अनुसार सूर्य, चन्द्र, ग्रह नक्षत्र व तारों के न तो कोई विमान हैं, न उन्हें कोई देवता खेंचते हैं। वे तो हमारी जैसी पृथ्वियाँ ही हैं। आधुनिक विज्ञान के अनुसार पृथ्वी नारंगी की तरह गोल होने से समुद्र के किनारे खड़े होने पर समुद्र बीच में उठा हुआ और बाद में ढला हुआ सा प्रतीत होता है और पृथ्वी, चन्द्रमा तथा सूर्य की आकर्षण शक्ति समुद्र में ज्वार भाटा उत्पन्न करती है। परन्तु जैन सिद्धांतानुसार पृथ्वी थाली की तरह चपटी है और भट्ट अकलंक देव के तत्वार्थ राजवार्तिक के तीसरे अध्याय के बत्तीसवें सूत्र के चौथे और आठवें वार्तिक में लिखा है कि लवण समुद्र में पाताल में 142000 देव रहते हैं, वे समुद्र को बीच में से ऊंचा उठाये हुए हैं। उन्हीं पातालों में नीचे वायुकुमार देव-देवियाँ नृत्य करती हैं उसके कारण वायु में जो विक्षोभ होता है उससे समुद्र में ज्वारभाटा होता है। क्या आज के वैज्ञानिक युग में ऐसी शास्त्रीय मान्यताएँ किसी के गले उतर सकती हैं? एक कथा का भी उदाहरण है कि मैना सुंदरी ने सिद्ध चक्र विधान किया उससे श्रीपाल का कुष्ट रोग दूर हो गया। जैनकर्म सिद्धान्त के अनुसार यह असम्भव है कि धर्म तो कोई एक व्यक्ति करे और उसका फल दूसरे व्यक्ति को मिलजावे। इसके अतिरिक्त, सिद्धचक्र विधान, आज कल जगह-जगह करवाये ही जा रहे हैं, श्रद्धालु बन्धु शफाखानों से कोढ़ियों को ले जाकर और उनका कोढ़ रोग दूर कराकर पुण्य उपार्जन क्यों नहीं करते?

अतः आवश्यक है कि सब परीक्षा प्रधानी बनें, जो युक्ति और विज्ञान से सिद्ध हो उसी को मानें।

जैन संस्कृति संरक्षण समिति

इस समिति के सदस्य निम्न नियमों के पालन को प्रतिज्ञाबद्ध होंगे—

(1) नित्य जिनेन्द्र उपासना एवं स्वाध्याय करना। (2) मद्य, मांस, मधु, अंडा, नशीले पदार्थ, त्रसहिंसा-जन्य आहार, अनछना जल व रात्रि में अन्नाहार का त्याग। (3) लोक व्यवहार में जीवन प्रामाणिक बनाए रखना और नैतिकता के नियमों के पालन का पूर्ण ध्यान रखना (4) अपने घर के लड़के के विवाह के लिए लड़की वाले से किसी भी प्रकार के लेनदेन की मांग व ठहराव नहीं करना, विवाह में दिखावा व प्रदर्शन न करना, न होने देना, जैन पद्धति से फेरे तथा सब कार्य दिन में ही सादगी से सम्पन्न कराना, ट्विस्ट (बाल डांस) नहीं होने देता, (5) जैन समाज में हीं विवाह सम्बन्धों को एवं सामूहिक विवाहों को प्रोत्साहन देना (6) मृत्यु से सम्बन्धित किसी भी प्रकार का भोज न स्वयं करना, न अन्य किसी के यहाँ मृत्यु भोज के लिए बनाया भोजन करना (7) जिनेन्द्र के सिवा अन्य रागी द्वेषी देवी-देवताओं (पद्मावती क्षेत्रपाल आदि) की उपासना, भक्ति व सम्मान नहीं करना, न सहयोग करना (8) जिन प्रतिमा पर पंचामृत अभिषेक नहीं करना, न सहयोग देना (9) उपासना में हवन नहीं करना, आरती नहीं करना, सचित्त फल पुष्प आदि नहीं चढ़ाना, न सहयोग देना (10) जिन प्रतिमा पर केशर नहीं लगाना, पुष्प नहीं चढ़ाना, भ. के चित्र को पुष्प-माला नहीं पहनाना, न सहयोग देना (11) केवल जाति व वर्ण आधार पर किसी को नीच नहीं मानना न इसमें सहयोग देना तथा किसी के उसके योग्य धार्मिक क्रियाओं के करने के अधिकार में बाधक नहीं बनना।

कृपया अधिक से अधिक संख्या में प्रतिज्ञा फार्म भरकर और एक रुपया प्रवेश शुल्क भेजकर समाज सुधार के इस महत्वपूर्ण संगठन को मजबूत बनावें।